छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में भारतीय संस्कृति की उपस्थिति

अर्चना त्रिपाठी

छत्तीसगढ़ प्रकृति प्रदेश है, जहाँ पेड़-पौधे, वनस्पतियाँ, पशु-पक्षियों का विचरण, नदी, नाले, तालाब निर्झर का अगाध सौंदर्य मानवीय चेतना का विस्तार करता है। जहाँ सूर्य की प्रखर तेजस्विता विद्यमान है, जहाँ जंगल की आदिम गंध मौजूद है। जहाँ जीवन, कला और संगीत में प्रवाहित होता है। सचमुच जीवन वहीं है, जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य है। छत्तीसगढ़ में भारत की सांस्कृतिक चेतना किस रूप में विद्यमान है इसे जानने के लिए वहाँ की कलाओं और लोकगीतों की यात्रा जरूरी है। छत्तीसगढ़ की भूमि रामायण काल के दंडाकारण्य का हिस्सा है। राम वन गमन की पदधूलि से वह भूमि आज भी पवित्र और सुवासित है। राम के प्रति वहाँ के लोग अपने लोकगीतों में कृतज्ञता व्यक्त करते दिखायी देते हैं।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में भारतीय संस्कृति के मूल्य संरक्षित हैं। सारा भारत वर्ष राममय और कृष्णमय है। यहाँ शिशु जन्म से राम और कृष्ण के रूप होते हैं। मुंडन संस्कार भी राम और कृष्ण का ही होता है। विवाह के रूप में वर-वधू राम और सीता ही होते हैं। कहने का अर्थ यह है कि लोकगीतों में समूचा सांस्कृतिक जीवन समाहित है। लोकगीतों को सुनने, गुनने से हम भारत की संस्कृति एवं इतिहास के ज्ञान का अवगाहन कर सकते हैं। पंडित विद्यानिवास मिश्र लोकगीतों को वाचिक कविता कहते हैं, जो अपनी परंपराओं, विश्वासों, रीति-रिवाजों से ग्रहण की जाती है। मिश्र जी ने 'वाचिक कविता : भोजपुरी' (पुस्तक) में लिखा है कि-"हमारी कोशिश वाचिक परंपरा से जीवंत जाग्रत रचनाएँ चुनने की रही है। हमारी वाचिक परंपरा के ये अंश हृदय का संस्पर्श करने वाले हैं।"

भाषिक ज्ञान-परंपरा की दृष्टि से भी लोकगीतों का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है। अपने बच्चे को भाषा का ज्ञान सर्वप्रथम माँ ही कराती है, इसलिए बच्चे की पहली गुरु माँ होती है और यही वजह है कि लोक भाषाएँ मातृभाषाएँ कहलाती हैं। माताएँ लोरियाँ सुना कर अपने बच्चों को मातृभाषा घुट्टी के रूप में पिलाती हैं। ये लोरियाँ एक तरफ जहाँ नन्हे-मुन्ने बच्चों के लिए अमृत स्वरूप होती हैं, वहीं दूसरी ओर ये मातृभाषा का बोधात्मक ज्ञान प्रदान करती हैं। सूरदास के पद को (जसोदा हरि पालने झुलावैं) लोरी के रूप में पूरे भारत भूमि की माताएँ गाती हैं और हर माँ का बच्चा उसके लिए किशन कन्हैया होता है। इसी तरह से चंदा से मामा का रिश्ता सहज जुड़ गया है। माताएँ बच्चों को चंदा मामा दिखाती हैं और बच्चों को बहलाने के लिए चंदा मामा को बुलाती हैं। चंदा-सूरज को भाई बंधु बनाना हमारी भारतीय संस्कृति का हिस्सा है। छत्तीसगढ़ में भी चंदा मामा की लोरी गायी जाती है–

"चंदा मामा एती आ ओती आ / नदिया किनारे आ" विविध प्रदेशों में गाये जाने वाले लोकगीतों में संरक्षित लोक-संस्कृति राष्ट्र की अंतरधाराएँ हैं, जो गंगा, यमुना के मेल से संगम संस्कृति का निर्माण करती हैं। वास्तव में देखा जाए तो जन-गण-मन का गीत भी लोकगीत है, जो मनुष्य के आत्मा की कविता है, जिसमें प्रकृति की आदिम गंध कस्तूरी बन छुपी हुई है।

लोकगीत हृदय तल की गहराई से जुड़ा हुआ है। पानी जितनी गहराई से निकलता है उतना ही मीठा और शीतल होता है। वैसा ही लोकगीतों के साथ भी है। देवी गीतों का आवाहन मातृ शक्तियों की ताकत को दर्शाता है। अष्ट मातृकाओं की कल्पना करके गाया जाने वाला देवी गीत स्त्री शक्ति का सूचक है।

इन प्रार्थना और उपासना गीतों से ही लोकगीत जीवन का महासंगीत है। कृष्णदेव उपाध्याय ने लिखा है– "मन की प्रबलता और आत्मा की प्रेरणा से अनेक व्यक्तियों के हृदय से संगीत की ध्वनि फूटती है अथवा एक व्यक्ति अनेक के हृदयगत भावों को संगीत ध्वनि से अभिव्यक्त करता है। उस ध्वनि को महासंगीत कहते हैं और वही महासंगीत वास्तविक लोकगीत है।"2

रामनरेश त्रिपाठी जी ने ठीक ही कहा है कि "ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं, इसमें अलंकार नहीं केवल रस है। छंद नहीं केवल लय है, लालित्य नहीं केवल माधुर्य है।"

संस्कृति के निर्माण में प्रकृति और कृषि दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। छत्तीसगढ़ में कृषि ही जीवन का आधार है। वहाँ के मांगलिक गीतों में खेती से जुड़े तमाम उपकरणों की पूजा की जाती है। इसके प्रमाण लोकगीतों में मिलते हैं। 'कोदो' और 'धान' की कई किस्मों का जिक्र भी लोकगीतों में मिलता है। इसके साथ ही छत्तीसगढ़ में भाजी (साक) के विविध रंग-रूप देखने को मिलते हैं। कहा जाता है कि वहाँ छत्तीस किस्म के साक (भाजी) होती हैं। वहाँ के गीतों में भी इन भाजियों का जिक्र आता है–

"नदिया तीरे के भाजी

पटुआ उल्हवा उल्हवा दिखथे रे।"

लोकगीतों में संस्कृति और प्रकृति की बद्‌धमूलता विद्‌यमान है, इसीलिए लोकगीतों का जब विभाजन किया जाता है तो मुख्यतः दो विभाजन होते हैं–संस्कार गीत और ऋतु (प्रकृति) गीत। संस्कार गीत संस्कृति से निर्मित हैं और ऋतु गीतों का सीधा संबंध प्रकृति से है। छत्तीसगढ़ में संस्कार के गीत खूब मिलते हैं–सोहर गीत, मुंडन गीत, जनेऊ गीत, विवाह संस्कार के बहुविध गीत और ऋतु गीतों के बारहमासी गीत, (जिसे हिंदी में बारहमासा कहा जाता है) बाँस गीत, करमा गीत। ये सभी प्रकृति से जुड़े गीत हैं। इसके अतिरिक्त भजन गाने की परंपरा भी देखने को मिलती है। छत्तीसगढ़ में रामनामी समाज के लोग राम के माहात्म्य को भजन शैली में गाते हैं। इन लोगों की आस्था इतनी दृढ़ और गहरी है कि ये अपने शरीर पर भी राम नाम का गोदना गुदवा कर घूमते हैं। यहाँ कबीर पंथ के भी भजन गाने की परंपरा है, जिसे निर्गुणिया गायन के रूप में जाना जाता है। छत्तीसगढ़ का 'दामाखेडा' कबीर पंथियों का विश्व प्रसिद्‌ध धाम है।

सतनामी परंपरा के महत्त्वपूर्ण गुरु हुए गुरुघासीदास जो साधना और सिद्‌धि द्‌वारा ईश्वर प्राप्ति की बात करते हैं। गुरु घासीदास ने अपने अमृत वचन लोकभाषा छत्तीसगढ़ी में व्यक्त किये हैं, जिन्हें वर्तमान समय में 'पंथी गायन' के रूप में जाना जाता है।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के माध्यम से यहाँ के सामाजिक सांस्कृतिक जीवन की अविच्छिन्न परंपरा को देखा जा सकता है। तमाम गीतों को पढ़ने-सुनने के बाद यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ राम

और कृष्ण के प्रति लोक आस्था बहुत गहरी है। छत्तीसगढ़ी संस्कार गीतों में राम भावना के सत्य के रूप में लोकमानस में रचे बसे हैं। राम सचमुच मंगल भवन अमंगल हारी हैं।

छत्तीसगढ़ में गाया जाने वाला एक सोहर है, जिसमें राम का जन्म होता है तो सूईन (दाई) आती है नार काटने। जिसके गीत का बोल है–

"राम जनम लिहें, भगवान जनम लिहें

चइत राम नवमी में राम जनम लिहें

सुइन आवय नेरुआ छिनै

नेरूवा छिनऊनी देबो मन के मडवनी।"

लोक की विशेषता यह होती है कि वह अलौकिक को भी लौकिक बनाकर आम जीवन व्यवहार से उसे जोड देता है। लोक की चेतना, जीवन-शैली, सामाजिक आचार व्यवहार शास्त्रोक्त से ही अनुशासित नहीं होती। इसी तरह से एक और सोहर है, जो कृष्ण जन्म से जुड़ा हुआ है। वहाँ भी शास्त्र को लौकिक ढंग से व्याख्यायित किया गया है। इस गीत में एक स्त्री ही दूसरी स्त्री के दुख को समझती है और इस भाव को बड़ी गहराई से व्यंजित किया है। गीत में एक प्रसंग है कि यमुना किनारे बैठ कर देवकी रो रही हैं तो उस पार नहा रही यशोदा को यह दिखायी देता है, फिर यशोदा यमुनापार करके आती हैं और देवकी से उनका दुख पूछती हैं और जब यशोदा को पता चलता है कि कंस देवकी के सभी संतानों को मार डालता है तो वह देवकी को वचन देती हैं कि इस बार मैं मदद करूँगी और कुछ भी करके आपकी संतान की रक्षा करूँगी। इस सोहर में बहनापे की साझी संस्कृति दिखायी देती है। गीत हमें यह बताता है कि एक स्त्री दूसरी स्त्री से ईर्ष्या और डाह नहीं करती, बल्कि अपने भीतर त्याग की भावना भी रखती है। हम सभी जानते हैं कि ग्रामीण स्त्रियों के भीतर परस्पर सहयोग की भावना आज भी है। लोक में लेन-देन और उधारी खूब चलती है और यह परस्पर सहयोग की भावना को ही दर्शाता है। इस प्रसंग में गीत के माध्यम से देवकी कहती हैं–

"नून अऊर तेल के उधारी

पईसा कौड़ के लेनी देनी ओ

बहिनी कोख के उधारी कइसे होय

में, कइसे धीरज धरौ ओ"

फिर यशोदा कहती हैं–

"चुप रह तैं चुप रह देवकी

मैं तोला समझावत हंवा ओ

मोर गरभ तोहाँ देतां

तोर ल बचई लेहवं ओ।"

लोक की स्त्रियाँ यशोदा के त्याग और बलिदान को गाती हैं, जिसने अपने गर्भ की अदला-बदली कर ली। एक स्त्री का दूसरी स्त्री के प्रति इतना बड़ा त्याग एक मिसाल है। यह भारत भूमि में ही संभव है। यह मातृत्व की पराकाष्ठा है।

सामाजिक अध्ययन की दृष्टि से ये गीत बड़े महत्वपूर्ण हैं। इन गीतों ने एक ओर सामाजिक संबद्धता, परंपराओं, मानवीय मूल्यों को स्थापित किया है तो दूसरी ओर सामाजिक रूढियों, सामंती व्यवहारों के प्रति प्रतिरोध का स्वर भी दिया है। गीतों में स्त्रियों की सामाजिक व मानसिक दशा का चित्रण भी मिलता है। तमाम दुखों के बीच ये स्त्रियाँ गहरी जिजीविषा को धारण किये हुए हैं, जो इस मृत संसार में मानो अमृत की धारा प्रवाहित करने की अनवरत कोशिश हो।

सचमुच लोकगीत लोक कंठहार हैं, जिसमें छंद नहीं, लय की माधुरी विद्यमान है। जीवन की लय के साथ प्रकृति की लय। यह लय ही इस समूची सृष्टि में है। यह जीवन स्पंदन है, जिसे जीवंतता कहा जा सकता है। इसके बिना जीवन व्यर्थ है और लययुक्त जीवन ही अमृत स्वरूप है। इस अमृत की धार को लोकगीतों ने अपने भीतर धारण कर लिया है। नदियों की धारा का प्रवाह लोकगीतों में घुला-मिला है। गंगा और जमुना की धारा से अटल सुहाग की परिकल्पना तो हमारे लोकगीतों में खूब है, लेकिन छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नदियों की अपेक्षा तालाब अधिक आते हैं। तालाब की संस्कृति छत्तीसगढ़ में खूब है। छोटे-बड़े बहुतायत तालाब छत्तीसगढ़ में देखने को मिलते हैं। विवाह गीतों में बारातियों के स्वागत सत्कार के गीत गाये जाते हैं, जिसमें यह जिक्र आता है कि चलो सभी तालाब स्नान कर आएँ–

"हाथ धरे लोटिया

खांधे धरे पोतिया

सगरी नहाय चले जाबो"

"कौन कोड़ावे ताले सगुरिया

कौन जंघायें ओखर पारे सजन मोर।"

छत्तीसगढ़ कृषि प्रधान प्रदेश है, जहाँ कृषि है वहीं संस्कृति भी है, बल्कि लोक-जीवन में कृषि ही संस्कृति है और उसी से जुड़े हुए सैकड़ों लोक त्यौहार हैं, जो मनुष्य को उत्सवधर्मी बनाये हुए हैं। छत्तीसगढ़ में फसलों की रोपाई, निराई-गुड़ाई के श्रम संबंधी गीत तो हैं ही लोक-जीवन में मनाये जा रहे त्यौहारों के गीत भी बहुतायत गाये जाते हैं, जैसे-भीमसेनी एकादशी, हरेली नागपंचमी, राखी, पुन्नी, भोजली, तीजा (हरतालिका तीज व्रत त्यौहार) इत्यादि अवसरों पर गाया जाने वाला गीत इस सभी लोक उत्सवों और त्यौहारों के पीछे

हमारी भारतीय संस्कृति के प्रति गहरी श्रद्धा तो है ही साथ ही लोकजीवन में सहज जीवन जीने की लालसा भी है। इन उत्सवों में अभी भी दिखावा या बाजार नहीं है, बल्कि जो कुछ सीमित संसाधन है उसी में उत्सव मनाने की परंपरा है। छत्तीसगढ़ी उत्सव गीत का एक बोल है-

"जीयत जन लेबो, हँसि लेबो खेल लेबो

मरे ल दुर्लभ संसार...।"

यह 'करमा' नाम से गाया जाने वाला लोकगीत है, जिसमें 'दुर्लभ संसार' में जन्म लेने के प्रति कृतज्ञता का भाव है और सहज जीवन जीने की कामना है। यही सच्ची मनुष्यता है। कृतज्ञता मानुष राग है, जिसे लोकगीतों में गाया जाता है।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम और आस्था है तथा भौतिक जन्य अभाव की तुलना मानवीय भावों की प्रधानता है। ये गीत अभाव में नहीं भाव में जन्म लेते हैं। हृदय के अंतःकरण में जन्म लेते हैं।

छत्तीसगढ़ में अगहन के महीने में 'मांदर' और 'मड़ई ' के पर्व बड़े उत्साह के साथ मनाये जाते हैं और खूब गीत गाये जाते हैं। इन गीतों में उल्लास होता है, जो तन-मन दोनों को प्रफुल्लित कर देता है। 'मातर पूजा' राउतों की विशेष पूजा है, जो पशुओं के आगंतुक रोग निवारणार्थ रात्रि में की जाती है। और मड़ई पूजा रोग की अधिष्ठात्री कंकाली देवी की पूजा है। संभव है यह प्राचीन काल के इंद्रध्वज से संबंधित पूजन परंपरा हो।

इन आदिवासी उत्सवधर्मी गीतों के बारे में श्यामसुंदर दूबे ने बिल्कुल ठीक लिखा है–"आदिवासी क्षेत्रों के लोकगीतों में न अधिक राग-रागिनियों का समावेश होता है और न ही उनका शब्द-संयोजन अधिक लंबा रहता है। कथात्मकता तथा विवरणात्मकता का तो उनमें एकदम अभाव ही रहता है। अक्सर वह एक प्रतिक्रिया पंक्ति होती है-प्रकृति के रंगों, पत्तों, फूलों की क्रियाओं से मेल खाती भावनाओं की मनुष्य की एकांतिकता को तोड़ने के लिए जो प्राकृतिक हरकतें सहयोग कर सकती हैं उनका उल्लेख तथा गायक की भावना का मिला-जुला संसार यह प्रतीक पंक्ति होती है। आदिवासी-इलाकों की लोकगीतों की लयें एकदम आदिम आरोहों-अवरोहों में ही जीवित रहती है। करमा नृत्य झूमती धान की फसल को परिलक्षित करता है। एक सीधी उठान और उसका फैलाव तथा पुनः उसका सिमटाव सतत् वृत्तों की सृष्टि।"

सचमुच ये करमा गीत, नृत्य प्राकृतिक जीवन से सीधे संवाद करते हैं उनका अनुकरण करते हैं और उन्हीं प्रकृति में लयमान होते हैं। धान की झूमती फसलों से स्त्रियाँ करमा नृत्य का लय सीख लेती हैं।

'पंडवानी गायन' छत्तीसगढ़ी लोक परंपरा की निजी पहचान है। पंडवानी में कथा भले ही शास्त्र से ग्रहण की गयी है, लेकिन उसे लोकजीवन व्यवहार से जोड़कर लोकगीत की शैली में ढाल दिया गया है। पंडवानी की माता दुरपति (द्रौपदी) 'तीजा-पोरा' में मायके जाने के अपने अधिकार की बात राजा अर्जुन से करती दिखायी देती है–

“सावन भादो के महिना आवे रे माई,

तीजा-पोरा मोला जान देवे

अतिका ला सुने राजा अरजुन हा

ऐती के पृथ्वी ऐती लहुटी जाही।”

तीजा छत्तीसगढ़ का महत्त्वपूर्ण त्यौहार है, जो हरतालिका तीज व्रत से जुड़ा हुआ है। इस दिन सभी स्त्रियाँ तीजा मनाने के लिए अपने-अपने मायके आ जाती हैं और धूम-धाम के साथ सरगी नहाते हुए रात्रि में शिव-पार्वती की पूजा विधि विधान से करती हैं। यह भी हमारी भारतीय लोक-संस्कृति का विस्तार है, जो लगभग प्रत्येक प्रांत में मनाया जाता है। मनाने का रंग-ढंग भले ही अलग हो, किंतु भाव सामान है। संस्कृति की मूल चेतना समान है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में धरती की सोंधी गंध है, फूलों की गमक है, पक्षियों की चहक है और ईश्वर के प्रति गहरी आस्था का दिव्य स्वर निहित है, जो जीवन में आशा का संचार करता है। यह आशावादिता ही भारतीय संस्कृति का मूल है। छत्तीसगढ़ आर्यों तथा अनार्यों का संगम स्थल रहा है। विभिन्न संस्कृतियों का मेल यहाँ हुआ है। डॉ. हीरालाल शुक्ला ने बस्तर के आदिवासी जनजातियों के लोकगीतों का अध्ययन करते हुए कहा है कि–“बस्तर का जनजातीय संगीत वैदिक तथा आगम संगीत के साथ आर्य व द्रविड़ संगीत का मिलन है।”

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में यहाँ के लोगों का विश्वास, लोक मान्यताएँ, रीति-रिवाज, जीवन-मूल्य सब कुछ सुरक्षित है। राम के प्रति यहाँ के लोग गहरे आस्थावान और कृतज्ञता से भरे हुए हैं। छत्तीसगढ़ में राम वन गमन के समय जगह-जगह ठहरे थे इसके प्रतीक चिन्ह मिलते हैं, जिसका जिक्र लोकगीतों में मिलता है। शबरी का आश्रम छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में है, जहाँ एक वट वृक्ष है, जिसके पत्ते आज भी दोने के आकार-प्रकार के होते हैं और वहाँ के लोगों का विश्वास है, कि इन पत्तों में शबरी ने राम को बेर खिलाया था, इसीलिए ये पत्ते ऐसे हैं।

यहाँ के गीतों में जातीय विशेषताएँ, पौराणिक कथाएँ और आदिम परंपराएँ मौजूद हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कार गीत यहाँ गाये जाते हैं, जो यह बताते हैं कि यहाँ भारतीय सनातन संस्कृति रची बसी है। इन गीतों में अनंत काल से चली आ रही सुदीर्घ परंपराएँ हैं, जो कि राम और कृष्ण से जुड़ी हुई हैं। इन गीतों में भारतीय संस्कृति के उच्चतम मानवीय मूल्य निहित हैं एवं सामाजिक स्तर पर सामूहिकता और परस्पर सहयोग की भावनाएँ हैं, जो लोकहिताय हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि भारतवर्ष तो एक राष्ट्र है। इसका हर प्रदेश एक-दूसरे से परस्पर संबद्ध है। विविधता के बीच एकरूपता और अनेकता में एकता का सूत्र इसको बांधे हुए हैं। संस्कार और संस्कृति में भी एक साम्यता है। आज हमारी शक्तियाँ विशृंखल और विघटित प्रतीत होती हैं और संगठन की दृष्टि

से शक्तियों का संगठित किया जाना अनिवार्य हो गया है। महाकवि जयशंकर प्रसाद ने कामायनी में लिखा है–

“शक्ति के विद्युतकण जो व्यस्त, विकल

बिखरे हैं हो निरुपाय,

समन्वय उनका करें समस्त

विजयिनी मानवता हो जाये।”

इन लोकगीतों के रचे जाने का भाव भी यही है कि समस्त मानवता का कल्याण हो, जीवन में मंगल हो, उत्सव हो, प्रकृति का संरक्षण हो। तालाब, नदियाँ, निर्झर, सूरज और चंद्रमा की तरह हमेशा रहें। प्रकृति को पूजने की परंपरा हमारे लोकगीतों में विद्यमान है। तुलसी विवाह गीत, वट सावित्री व्रत गीत, यह सभी गीत पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें इन वृक्षों, लताओं के दीर्घ संरक्षण की चेष्टा विद्यमान है।

लोकजीवन हमारे राष्ट्र की आधारशिला है और लोकगीत इसी आधारशिला को बचाये रखने की अनवरत चेष्टा है, क्योंकि लोक-जीवन का मर्म ही लोकगीत है। अतः इन लोकगीतों को जानने-समझने-सीखने से राष्ट्रीय संकट को दूर किया जा सकता है और समाज में परस्पर सहयोग और उदारता की भावना को सुदृढ़ किया जा सकता है। इस उदारता की भावना से ही 'उदारचरितानाम् तु वसुधैव कुटुंबकम्' का भाव मजबूत होगा।

पंडित ओमकारनाथ ठाकुर ने तो यहाँ तक कहा है कि शास्त्रीय भारतीय संगीत की पृष्ठभूमि लोक संगीत है।

संदर्भ

1. भोजपुरी वाचिक कविता : भोजपुरी विद्यानिवास मिश्र, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ 6,
2. लोक साहित्य की भूमिका डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय, साहित्य भवन प्रा.लि. इलाहाबाद, पृष्ठ 65,
3. कविता कौमुदी : राम नरेश त्रिपाठी, हिंदी मंदिर प्रयाग, पृष्ठ 96
4. छत्तीसगढ़ी संस्कार गीत, डॉ. पी-सी लाल यादव, प्रकाशक-दूध मोंगरा गंडई छ.ग., पृष्ठ 73
5. वही, पृष्ठ 10
6. वही, पृष्ठ 22
7. वही, पृष्ठ 70
8. भाषा पत्रिका जुलाई-अगस्त, 2005, पृष्ठ 164,

9. वही, पृष्ठ 165

10. लोकसंस्कृति आयाम एवं परिप्रेक्ष्य, सं. महावीर अग्रवाल श्री प्रकाशन, दुर्ग, पृष्ठ 67,

11. वही, पृष्ठ 263

12. वही, पृष्ठ 7

13. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 29

14. भारतीय लोक संगीत की आत्मा, पृष्ठ 293,

अर्चना त्रिपाठी, जीसस एण्ड मेरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली